ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 350-352
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका

डा0 करूण कुमार गुप्ता

असिस्टेन्ट प्रोफेसर– समाजशास्त्र विभाग, रामभजन पी0जी0 कॉलेज, चकहुसैन, थलईपुर, मऊ (उ0प्र0), भारत

Received-21.12.2023, Revised-24.12.2023, Accepted-31.12.2023 E-mail: karungupta292@gmail.com

सारांशः ***आज भारत के राजनीतिक महौल में जाति एक बड़ा ही संवेदनशील मुद्दा बन चुका है। राजनीति में जाति का अर्थ है जाति का राजनीतिकरण अर्थात अपने स्वजाति को अपने दायरे में लाने का प्रयास करना तथा अपने हित के लिए काम कराना। जहां तक भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका का सवाल है इस तथ्य से इंकार नही किया जा सकता है कि भारतीय राजनीति में जाति ने अहम भूमिका निभाई है और वर्तमान समय भी निभा रही है। आज देखा जाये तो राजनीतिक गठबंधन बनाने में जाति की भूमिका अहम होती जा रही है। पार्टिया अक्सर अपने वोट बैंक को मजबूत करने के लिए जाति आधारित भागीदारी की तलाश करती है। आज के समय में जाति, चुनावों में एक शक्तिशाली और प्रभावशाली शक्ति के रूप में कार्य कर रही है। सरल शब्दों में कहें तो वर्तमान समय में भारतीय राजनीति को जाति आधारित राजनीति भी कह सकते है। देखा जाए तो भारतीय राजनीति में चुनावों के दौरान पार्टियां उसी प्रत्याशी को टिकट देती है जो उसे क्षेत्र में जाति के आधार पर संख्या में अधिक हो तथा उस निर्वाचन क्षेत्र में अपना प्रभाव रखता हो। कभी–कभी ऐसा भी देखा जाता है कि पार्टिया दूसरे जाति के प्रत्याशी को टिकट दे देती है, जो उस निर्वाचन क्षेत्र में जाति के संख्या के आधार पर कम हो पर ऐसा कूड़े के अम्बार में आलपिन ढूंढ़ने जैसा है। भारतीय राजनीति में जाति हमेशा से एक बहुत महत्वपूर्ण एवं निर्णायक कारक भूमिका में रही है। राजनीति में जाति का प्रभाव कम होने के बजाय बढ़ता ही जा रहा है।***

कुंजीभूत शब्द– राजनीतिक महौल, संवेदनशील मुद्दा, राजनीति, राजनीतिकरण, स्वजाति, भूमिका, वर्तमान समय।

सामाजिक–आर्थिक एवं शैक्षणिक मुद्दों के बजाय जाति आधारित वोट बैंक की राजनीति ने भारत में चुनावी विकल्पों को अब निर्धारित करना शुरू कर दिया है। वर्तमान समय में सभी राजनीतिक दलों ने विशेष जातियों को वोट बैंक मान रहे है। भारत में जाति सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना का एक हिस्सा है और वर्षो से हमेशा महत्वपूर्ण अध्ययन का विषय रही है। चुनावी राजनीति में उम्मीदवारों के नामांकन मे जाति एक महत्वपूर्ण तत्व है। उम्मीदवारों के चयन के समय हर राजनीतिक दल हमेशा उम्मीदवार की जाति और उस निर्वाचन क्षेत्र में जाति के बहुमत को ध्यान में रखता है, उसके उपरान्त ही टिकट का बंटवारा करता है। ऐसा करने से राजनीतिक दलों को विशेष जाति के वोट का आश्वासन मिलता है। उम्मीदवार जाति आधारित नारे भी लगाता है (चाहे गलत हो या सही) और अपने जाति पर उत्पीड़न को गिनाता है । इस तरह के नारे उस निर्वाचन क्षेत्र के विशेष जाति के मतदाताओं पर बहुत प्रभाव डालते है और चुनावों के दौरान स्वजाति के प्रत्याशी को ही वोट देते है।

"भारत में चुनावी लोकतंत्र के उदय ने बहुत उपजाऊ जमीन तैयार की। जाति व्यवस्था एक बंद व्यवस्था है लेकिन यह अभी भी विकसित हो रही है। अंग्रेजों ने जाति को भारत की सामाजिक वास्तविकता को समझने के लिए एक चश्में के रूप में देखा श्वेत व्यक्ति का बोधश। भारत में जाति अपने शासन को सही ठहराने का एक हथियार बन गई। इससे लोगों मे जातिगत संघर्ष शुरू हुए। जाति ने सामाजिक चेतना में भी मंथन शुरू कर दिया। इसलिए भारतीय समाज में जाति विकसित होने लगी। आधुनिक संविधान ने अपृश्यता को समाप्त कर दिया, 1976 में भी (नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम), सीटों का आरक्षण जिसके परिणाम स्वरूप अततः जाति का और अधिक ठोसकरण हुआ। भारत में जाति और जातिवाद कभी गायब नही हुआ। मायरेन बेनर की श्राजनीति सह–चुनावश की अवधारणा बहुत प्रासंगिक हो गई। कांग्रेस और अन्य दलों द्वारा अपनाई गई राजनीतिक लामबंदी की नीति के परिणामस्वरूप कई निचली जातियों को पार्टी में शामिल किया गया। जाति के नैतिक आधार के क्षरण के साथ, निचली जातियों द्वारा विरोध करने की स्व–लगाई गई बाधा भी मिट गई।

इस प्रकार रजनी कोठारी के अनुसार, भारत में जाति के राजनीतिकरण ने दलीय राजनीति के विकास में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होने साबित किया कि जाति का राजनीतिकरण एक दोहरी प्रक्रिया है। जब जाति समूह राजनीति को अपनी गतिविधियों का क्षेत्र बनाते है, तब जाति समूहों को अपनी पहचान स्थापित करने और स्थिति के लिए प्रमुख जाति की अवधारणा का उपयोग किया।

एक प्रमुख जाति वह जाति है जो संख्यात्मक रूप से हावी होती है, अपनी संख्यात्मक प्रबलता के कारण यह राजनीतिक शक्ति का आनन्द लेती है। राजनेता चुनावों के दौरान जाति को एक आसान और सुविधाजनक साधन मानते है। भारतीय राज्यों में राजनीति को राजनीतिक सत्ता के लिए प्रमुख जाति समूहों के बीच प्रतिस्पर्धा के रूप में देखा गया है। जाति को राष्ट्रीय राजनीति को खंडित करने के लिए भी कहा जाता है।"[1]

आज देश, जातिवाद के कारण खड़ी होने वाली कई गंभीर समस्याओं से जूझ रहा है, जबकि हमारे विभिन्न राजनीतिक दलों के नेता जातिवाद को बढ़ावा देने पर आमादा है। यहां यह कहने में संकोच नही होना चाहिए कि राष्ट्रीय दलों के साथ–साथ क्षेत्रीय दलों ने जातिवाद को बढ़ावा दिया है। आज देखा जा रहा है कि तमाम बुरे परिणामों के बाद भी जातिवाद की राजनीति को कम या समाप्त नही किया जा सका। कई राष्ट्रीय और क्षेत्रीय दल जातिवाद की राजनीति के सहारे सत्ता में काबिज हो रहे है। जबकि देखा जाए तो जातिवादी राजनीति देश की एकता एवं अखण्डता के लिए खतरा होने के साथ राष्ट्र निर्माण और विकास में बाधा उत्पन्न करता है।

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

"जातिवाद अब भी हम में मौजूद है और मूल मजबूती को खोए बिना नए रूप धारण करता चला जा रहा है। वस्तुतः कुछ प्रेक्षक तो यह अनुभव करते है कि गणतांत्रिक राजनीति और जन संगठनों ने जातिवाद को मंच के बीचो–बीच खड़ा कर दिया हैं। खेद के साथ कहना पड़ता है कि मध्यवर्ती पिछड़े वर्गो के नेता भी इस पथभ्रम से मुक्त नही है और न ही वे इतने कल्पनाशील है कि वे अति पिछड़े वर्गो के नाम पर आर्थिक तथा राजनीतिक शक्ति हथियाने में कुछ असंतुष्ट उच्च जातियों के साथ होड़ लगा रहे है। यह एक मानसिक पथ–भ्रष्ट है, इसकी भरपूर निंदा की जानी चाहिए।"[2] स्पष्ट है कि वर्तमान समय राजनीतिक दल अपने राजनीतिक स्वार्थो के चलते जाति व समाज का खण्डात्मक विभाजन कर रहे है।

"आज भारत को सामाजिक और राजनीतिक माहौल में श्जातिश एक बड़ा ही संवेदनशील मुद्दा बन चुका है, जिसकी सहायता से सियासी दलों द्वारा चुनावी जंग जीतने की रणनीति बनाई और बिगाड़ी जा रही है। इसमें उनकों सफलता भी मिल रही है। और दिनोंदिन राजनीति के समीकरण बैठाने में इसकी निर्णायक भूमिका हावी होती जा रही है। यह तब है जब जाति के उन्मूलन के लिए आधुनिक काल में स्वतंत्रता मिलने से पहले से ही नेताओं और अनेक समाज सुधारकों ने पुरजोर कोशिश की थी और समाज को जाति–प्रथा की जंजीरों से मुक्त करने में स्वप्र को आकार दिया।"[3] "भारतीय राजनीति आज मुद्दों और सरोकारों से अधिक छोटे प्रपंचों में फंसती जा रही है। जाति, जुमले और जुबानी जंग के सहारे हवा में तलवारें भांजते कई नेताओं की वाचालता क्षुब्ध करने वाली है। इक्कीसवीं सदी में समर्थ भारत का स्पप्न देखने वालों को समता और समानता का व्यापक दृष्टिकोण अपनाना होगा। विषमता दूर करते हुए जाति मुक्त समाज बनाना ही भविष्य की राह बन सकता है।"[4]

आज भारतीय समाज कई खांचों में विभाजित है, और इसी मे एक अहम विभाजित रेखा जाति भी है। वर्तमान समय में देश के राजनीतिक माहौल में श्जातिश एक बड़ा संवेदनशील मुद्दा बन चुका है। जिसका पूरा लाभ देश को विभिन्न राजनीतिक दल उठाते रहे, और आज भी उठा रहे है। वर्तमान समय में चुनावों के नजदीक आते ही राजनीतिक दलों में आम मतदाताओं को लामबंद करने के लिए जातीय अस्मिताओं को आधार बनाने की होड़ सी बन गई है। राष्ट्रीय दल हो या क्षेत्रीय, सभी जातीय अस्मिताओं को अपने लाभ के लिए इस्तेमाल करना चाहते है।

"भारतीय राजनीति में जातीय और क्षेत्रीय अस्मिताओं का इस्तेमाल हमेशा ही होता रहा है, लेकिन इस बार के आम चुनाव की तैयारी के लिए कमर कसते ही राजनीतिक दलों में आम मतदाताओं को लामबंद करने हेतु इन दोनों अस्मिताओं को आधार बनाने की होड़ सी लग गई है। चाहे वे राष्ट्रीय दल हो या क्षेत्रीय, सभी इन अस्मिताओं को अपने लाभ के लिए इस्तेमाल करना चाहते है। अगर एक राष्ट्रीय दल दलितों को लुभाकर राज्य सभा भेज रहा है या फिर प्रांत में गठबंधन कर रहा है, वो दूसरी ओर दूसरा दल पिछड़ेपन के आधार पर जाटों को पिछड़ी जाति की सूची में डाल रहा है। इसी कड़ी में कुछ क्षेत्रीय राजनीतिक संगठन तेलंगाना पर राजनीति करते रहे और अंत में जब चुनाव के ऐन मौके पर केन्द्र सरकार ने आन्ध्र प्रदेश के विभाजन की घोषणा की तो वे अनशन पर चले गए। इस सबके दौरान हिंसा भी हुई और उर्जा व समय की बर्बादी भी। लगता है कि दलों और संगठनों की सेहत पर कोई असर नही पड़ा। आश्चर्य की बात है कि आर्थिक व सांस्कृतिक रूप से पिछड़े पूर्वोत्तर व छोटा नागपुर पठार के आदिवासियों पर बहस न के बराबर है।"[5] "जाति प्रथा ने केवल हमारे मध्य वैमनस्यता को बढ़ाती है बल्कि ये हमारी एकता में भी दरार पैदा करने का काम करती है। जाति प्रथा प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में बचपन से ही ऊँच–नीच, उत्कृष्टता–निकृष्टता के बीज बो देती है। अमूक जाति का सदस्य होने के नाते किसी को लाभ होता है तो किसी को हानि उठानी पड़ती है। जाति श्रम की प्रतिष्ठा की संकल्पना के विरूद्ध कार्य करती है और ये हमारी राजनीति दासता का मूल कारण रही है। जाति प्रथा से आक्रांत समाज की कमजोरी विस्तृत क्षेत्र में राजनीतिक एकता को स्थापित नही करा पाती तथा यह देश पर किसी बाहरी आक्रमण के समय एक बड़े वर्ग को हतोत्साहित करती है। स्वार्थी राजनीतिज्ञों के कारण जातीवाद ने पहले से भी अधिक भयंकर रूप धारण कर लिया है, जिसमें सामाजिक कटुता बढ़ी है।"[6] मै यहां यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि भारतीय राजनीति में जातियों के प्रयोग का ही दुष्परिणाम है कि अलग–अलग क्षेत्र में अलग–अलग जातियों ने सत्ता व शासन में अपना एकाधिपत्य बना लिया है और इसी का परिणाम है कि मजबूर होकर कमजोर जातियों ने भारतीय प्रजातंत्र में अपने भागीदारी के लिए अलग संगठन बनाना शुरू कर दिया। अगर हमें प्रजातंत्र को शक्तिशाली बनाना है तो सभी अस्मिताओं को स्वाभाविकता के आधार पर करना होगा।

हम सभी लोग जानते है कि जातीयता और जातिवाद राष्ट्र निर्माण व राष्ट्र के प्रगति में बाधक है, फिर भी आज हर राजनीतिक दल जाति का सहारा ले रहा है। आज अगर हम जाति के आधार पर राष्ट्रीय राजनीतिक दलों के संगठनात्मक ढांचे को देखे तो उनमें स्पष्ट तौर पर एस.सी./एस.टी. सेल अथवा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति प्रकोष्ठ पाये जायेंगें, जो प्रत्यक्ष रूप से इन जातियों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने हेतु बनाए गए है। "पांच राज्यों में चुनाव चल रहे है। राजनीतिक दल चुनाव जीतने के लिए हर तरह के हथकंडे अपना रहे है। वह सत्ता पाने के लिए जाति और धर्म तक का भी सहारा ले रहे है। नेता अपने क्षेत्रों में वोटरों को लुभाने के लिए एड़ी चोटी का जोर लगा रहे है। इस विषय पर अमर उजाला डॉट कॉम ने ऑनलाईन पोल में अपने पाठकों से सवाल पूछा था, क्या राजनीति में धर्म और जाति का सहारा लिया जाना चाहिए ? पोल के जवाब में हमें कुल 4241 वोट मिले। इनमें से 15 फीसदी (636 वोट) पाठकों ने माना कि हां राजनीति में धर्म और जाति का सहारा लिया जाना चाहिए, जबकि 85 फीसदी (3605) पाठकों ने माना कि राजनीति में धर्म और जाति का सहारा नही लिया जाना चाहिए।"[7] अमर उजाला ने जो आनलाइन पोल अपने पाठकों से पूछा उसमें 15 फीसद या 636 पाठकों ने माना कि जाननीति में जाति एवं धर्म का सहारा लेना उचित है। मेरी नजर में ये 15 फीसदी लोग वे लोग कट्टर जाति स्वभाव के होंगे, वरना एक राष्ट्र का पढ़ा–लिखा इंसान कभी नही चाहेगा कि राजनीति में धर्म या जाति का सहारा लिया जाये। 85 फीसदी पाठक जिन्होने माना कि राजनीति में धर्म या जाति का सहारा लेना उचित नही है व पाठक धन्यवाद के पात्र है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

जिन्होने सच कहने का साहस दिखाया। हम सभी जानते है कि जाति और राजनीति एक दूसरे से जुड़े है। ये एक दूसरे को प्रभावित करती है। राष्ट्रीय, राज्य एवं स्थानीय चुनावों के मध्य भूमिका होती है। आज हम देख रहे है कि राजनीतिक दलों का गठन कई कारणों से होता है जिनमें जाति एक प्रमुख कारक होती है। भारत ऐ धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है। इसके बावजूद जाति, राजनीति का एक प्रमुख हिस्सा है। इससे इंकार नही किया जा सकता है। इसलिए राजनीति में जाति एक महत्वपूर्ण कारक रही है और वर्तमान समय में है भी।

निष्कर्ष– वर्तमान समय में भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका को कम करके नही देखा जा सकता है। जाति अब राजनीतिक समर्थन या शक्ति का एकमात्र आधार नही रही, यद्यपि राजनीति में इनका अधिकाधिक उपयोग किया जा रहा है। जाति ने चुनावी गतिशीलता, राजनीतिक गठबंधनों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया है। जाति आधारित राजनीति, सामाजिक और आर्थिक विषमताओं का प्रतिक्रिया के रूप में उभरी है। इन असमानताओं का सामना हासिए पर पड़ी जातीयों को करना पड़ता है। जाति न केवल हम लोगों के बीच वैमनस्यता को बढ़ाती है बल्कि ये हमारी एकता में भी दरार पैदा करती है। जातिवाद राष्ट्र के विकास में मुख्य बाधा है। राजनीतिक दलों को चाहिए कि जातिवाद को कभी भी प्रात्साहन न दें। जातिवादी प्रवृत्ति वाले राजनीतिक दल, "स्वजाति के हितों का ध्यान रखते है न कि सभी जातियों का।

वर्तमान परिवेश में हम देखे तो जाति आधारित गठबंधन और गठबंधन की राजनीति आम हो गई है। इस बात से इंकार नही किया जा सकता है कि आज की राजनीति, जाति आधारित राजनीति हो चुकी है। यह कहने में जरा भी संकोच नही होना चाहिए कि आज हर राजनीतिक दल की जातीय राजनीति करना एक मजबूरी सी हो गई है। इस जातीय समीकरण के बिना चुनावों के दौरान प्रत्याशी लड़ाना अब असम्भव सा प्रतीत हो रहा है। जबकि इस लोकतांत्रिक देश में ऐसा नही होना चाहिए। ये राष्ट्र के लिए शुभ संकेत नही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सहेली समद्दर के ब्लाग से प्रकाशित जुलाई 05, 2021.
2. जातीय विभाजन की राजनीति, कही मारा न जाए जरूरतमंदो का हक, अभिषेक प्रताप सिंह, 19 जनवरी 2018 दैनिक जागरण ऐप से (हिन्दी न्यूज राष्ट्रीय)।
3. जाति आखिर जाति क्यों नही ? भारतीय राजनीति आज मुद्दों से अधिक छोटे प्रपंचों में फंसती जा रही है। दैनिक जागरण एप से संपादकीय भूपेन्द्र सिंह 26 अप्रैल 2019.
4. वही।
5. क्षेत्र और जाति की राजनीति, प्रो0 विवेक कुमार, जागरण न्यूज एप से, हिन्दी न्यूज राष्ट्रीय 23 मार्च 2014.
6. भारत में जातिवाद की समस्या और जाति की जकड़न में कराहता लोकतंत्र, देवेन्द्र सुधार, जनवरी 2020, अमर उजाला (हिन्दी न्यूज एप से)।
7. अमर उजाला पोल : राजनीति में नही लिया जाना चाहिए धर्म और जाति का सहारा, न्यूज डेस्क, अमर उजाला एप से, नई दिल्ली, 21 नवम्बर 2018.

*****